लक्ष्मण-मेघनाद युद्ध, लक्ष्मणजी को शक्ति लगना

***कालरूप खल बन दहन गुनागार घनबोध। सिव बिरंचि जेहि सेवहिं तासों कवन बिरोध॥48 ख॥

भावार्थ:-

जो कालस्वरूप हैं, दुष्टों के समूह रूपी वन के भस्म करने वाले (अग्नि) हैं, गुणों के धाम और ज्ञानघन हैं एवं शिवजी और ब्रह्माजी भी जिनकी सेवा करते हैं, उनसे वैर कैसा?॥48 (ख)॥

चौपाई :

*** परिहरि बयरु देहु बैदेही। भजहु कृपानिधि परम सनेही॥ ताके बचन बान सम लागे। करिआ मुँह करि जाहि अभागे॥1॥

भावार्थ:-

(अतः) वैर छोड़कर उन्हें जानकीजी को दे दो और कृपानिधान परम स्नेही श्री रामजी का भजन करो। रावण को उसके वचन बाण के समान लगे। (वह बोला-) अरे अभागे! मुँह काला करके (यहाँ से) निकल जा॥1॥

*** बूढ़ भएसि न त मरतेउँ तोही। अब जनि नयन देखावसि मोही॥ तेहिं अपने मन अस अनुमाना। बध्यो चहत एहि कृपानिधाना॥2॥

भावार्थ:-

तू बूढ़ा हो गया, नहीं तो तुझे मार ही डालता। अब मेरी आँखों को अपना मुँह न दिखला। रावण के ये वचन सुनकर उसने (माल्यवान् ने) अपने मन में ऐसा अनुमान किया कि इसे कृपानिधान श्री रामजी अब मारना ही चाहते हैं॥2॥

*** सो उठि गयउ कहत दुर्बादा। तब सकोप बोलेउ घननादा॥ कौतुक प्रात देखिअहु मोरा।करिहउँ बहुत कहौं का थोरा॥3॥

भावार्थ:-

वह रावण को दुर्वचन कहता हुआ उठकर चला गया। तब मेघनाद क्रोधपूर्वक बोला- सबेरे मेरी करामात देखना। मैं बहुत कुछ करूँगा, थोड़ा क्या कहूँ? (जो कुछ वर्णन करूँगा थोड़ा ही होगा)॥3॥

*** सुनि सुत बचन भरोसा आवा। प्रीति समेत अंक बैठावा॥ करत बिचार भयउ भिनुसारा। लागे कपि पुनि चहूँ दुआरा॥4॥

भावार्थ:-

पुत्र के वचन सुनकर रावण को भरोसा आ गया। उसने प्रेम के साथ उसे गोद में बैठा लिया। विचार करते-करते ही सबेरा हो गया। वानर फिर चारों दरवाजों पर जा लगे॥4॥

*** कोपि कपिन्ह दुर्घट गढु घेरा। नगर कोलाहलु भयउ घनेरा॥ बिबिधायुध धर निसिचर धाए।

गढ़ ते पर्बत सिखर ढहाए॥5॥

भावार्थ:-

वानरों ने क्रोध करके दुर्गम किले को घेर लिया। नगर में बहुत ही कोलाहल (शोर) मच गया। राक्षस बहुत तरह के अस्त्र-शस्त्र धारण करके दौड़े और उन्होंने किले पर पहाड़ों के शिखर ढहाए॥5॥

छंद :

*** ढाहे महीधर सिखर कोटिन्ह बिबिध बिधि गोला चले। घहरात जिमि पबिपात गर्जत जनु प्रलय के बादले॥ मर्कट बिकट भट जुटत कटत न लटत तन जर्जर भए। गहि सैल तेहि गढ़ पर चलावहि जहँ सो तहँ निसिचर हए॥

भावार्थ:-

उन्होंने पर्वतों के करोड़ों शिखर ढहाए, अनेक प्रकार से गोले चलने लगे। वे गोले ऐसा घहराते हैं जैसे वज्रपात हुआ हो (बिजली गिरी हो) और योद्धा ऐसे गरजते हैं, मानो प्रलयकाल के बादल हों। विकट वानर योद्धा भिड़ते हैं, कट जाते हैं (घायल हो जाते हैं), उनके शरीर जर्जर (चलनी) हो जाते हैं, तब भी वे लटते नहीं (हिम्मत नहीं हारते)। वे पहाड़ उठाकर उसे किले पर फेंकते हैं। राक्षस जहाँ के तहाँ (जो जहाँ होते हैं, वहीं) मारे जाते हैं।

दोहा :

*** मेघनाद सुनि श्रवन अस गढ़ पुनि छेंका आइ। उतर्‌यो बीर दुर्ग तें सन्मुख चल्यो बजाइ॥49॥

भावार्थ:-

मेघनाद ने कानों से ऐसा सुना कि वानरों ने आकर फिर किले को घेर लिया है। तब वह वीर किले से उतरा और डंका बजाकर उनके सामने चला॥49॥

चौपाई :

*** कहँ कोसलाधीस द्वौ भ्राता। धन्वी सकल लोत बिख्याता॥ कहँ नल नील दुबिद सुग्रीवा। अंगद हनूमंत बल सींवा॥1॥

भावार्थ:-

(मेघनाद ने पुकारकर कहा-) समस्त लोकों में प्रसिद्ध धनुर्धर कोसलाधीश दोनों भाई कहाँ हैं? नल, नील, द्विविद, सुग्रीव और बल की सीमा अंगद और हनुमान् कहाँ हैं?॥1॥

*** कहाँ बिभीषनु भ्रातद्रोही। आजु सबहि हठि मारउँ ओही॥ अस कहि कठिन बान संधाने। अतिसय क्रोध श्रवन लगि ताने॥2॥

भावार्थ:-

भाई से द्रोह करने वाला विभीषण कहाँ है? आज मैं सबको और उस दुष्ट को तो हठपूर्वक (अवश्य ही) मारूँगा। ऐसा कहकर उसने धनुष पर कठिन बाणों का सन्धान किया और अत्यंत क्रोध करके

उसे कान तक खींचा॥2॥

*** सर समूह सो छाड़ै लागा। जनु सपच्छ धावहिं बहु नागा॥ जहँ तहँ परत देखिअहिं बानर। सन्मुख होइ न सके तेहि अवसर॥3॥

भावार्थ:-

वह बाणों के समूह छोड़ने लगा। मानो बहुत से पंखवाले साँप दौड़े जा रहे हों।जहाँ-तहाँ वानर गिरते दिखाई पड़ने लगे। उस समय कोई भी उसके सामने न हो सके॥3॥

*** जहँ तहँ भागि चले कपि रीछा। बिसरी सबहि जुद्ध कै ईछा॥ सो कपि भालु न रन महँदेखा। कीन्हेसि जेहि न प्रान अवसेषा॥4॥

भावार्थ:-

रीछ-वानर जहाँ-तहाँ भाग चले। सबको युद्ध की इच्छा भूल गई। रणभूमि में ऐसा एक भीवानर या भालू नहीं दिखाई पड़ा, जिसको उसने प्राणमात्र अवशेष न कर दिया हो (अर्थात् जिसके केवल प्राणमात्र ही न बचे हों, बल, पुरुषार्थ सारा जाता न रहा हो)॥4॥

दोहा :

*** दस दस सर सब मारेसि परे भूमि कपि बीर। सिंहनाद करि गर्जा मेघनाद बल धीर॥50॥

भावार्थ:-

फिर उसने सबको दस-दस बाण मारे, वानर वीर पृथ्वी पर गिर पड़े। बलवान् और धीर मेघनाद सिंह के समान नाद करके गरजने लगा॥50॥

चौपाई :

*** देखि पवनसुत कटक बिहाला। क्रोधवंत जनु धायउ काला॥ महासैल एक तुरत उपारा। अति रिस मेघनाद पर डारा॥1॥

भावार्थ:-

सारी सेना को बेहाल (व्याकुल) देखकर पवनसुत हनुमान् क्रोध करके ऐसे दौड़े मानो स्वयं काल दौड़ आता हो। उन्होंने तुरंत एक बड़ा भारी पहाड़ उखाड़ लिया और बड़े ही क्रोध के साथ उसे मेघनाद पर छोड़ा॥1॥

*** आवत देखि गयउ नभ सोई। रथ सारथी तुरग सब खोई॥ बार बार पचार हनुमाना। निकट न आव मरमु सो जाना॥2॥

भावार्थ:-

पहाड़ों को आते देखकर वह आकाश में उड़ गया। (उसके) रथ, सारथी और घोड़े सब नष्ट हो गए (चूर-चूर हो गए) हनुमान्‌जी उसे बार-बार ललकारते हैं। पर वह निकट नहीं आता, क्योंकि वह उनके बल का मर्म जानता था॥2॥

*** रघुपति निकट गयउ घननादा। नाना भाँति करेसि दुर्बादा॥ अस्त्र सस्त्र आयुध सब डारे। कौतुकहीं प्रभु काटि निवारे॥3॥

भावार्थ:-

(तब) मेघनाद श्री रघुनाथजी के पास गया और उसने (उनके प्रति) अनेकों प्रकार के दुर्वचनों का प्रयोग किया। (फिर) उसने उन पर अस्त्र-शस्त्र तथा और सब हथियार चलाए। प्रभु ने खेल में ही सबको काटकर अलग कर दिया॥3॥

*** देखि प्रताप मूढ़ खिसिआना। करै लाग माया बिधि नाना॥ जिमि कोउ करै गरुड़ सैं खेला। डरपावै गहि स्वल्प सपेला॥4॥

भावार्थ:-

श्री रामजी का प्रताप (सामर्थ्य) देखकर वह मूर्ख लज्जित हो गया और अनेकों प्रकार की माया करने लगा। जैसे कोई व्यक्ति छोटा सा साँप का बच्चा हाथ में लेकर गरुड़ को डरावे और उससे खेल करे॥4॥

दोहा :

*** जासु प्रबल माया बस सिव बिरंचि बड़ छोट। ताहि दिखावइ निसिचर निज माया मति खोट॥51॥

भावार्थ:-

शिवजी और ब्रह्माजी तक बड़े-छोटे (सभी) जिनकी अत्यंत बलवान् माया के वश में हैं, नीच बुद्धि निशाचर उनको अपनी माया दिखलाता है॥51॥

चौपाई : :

*** नभ चढ़ि बरष बिपुल अंगारा। महि ते प्रगट होहिं जलधारा॥ नाना भाँति पिसाच पिसाची। मारु काटु धुनि बोलहिं नाची॥1॥

भावार्थ:-

आकाश में (ऊँचे) चढ़कर वह बहुत से अंगारे बरसाने लगा। पृथ्वी से जल की धाराएँ प्रकट होने लगीं। अनेक प्रकार के पिशाच तथा पिशाचिनियाँ नाच-नाचकर 'मारो, काटो' की आवाज करने लगीं॥1॥

*** बिष्टा पूय रुधिर कच हाड़ा। बरषइ कबहुँ उपल बहु छाड़ा॥ बरषि धूरि कीन्हेसिअँधिआरा। सूझ न आपन हाथ पसारा॥2॥

भावार्थ:-

वह कभी तो विष्टा, पीब, खून, बाल और हड्डियाँ बरसाता था और कभी बहुत से पत्थर फेंक देता था। फिर उसने धूल बरसाकर ऐसा अँधेरा कर दिया कि अपना ही पसारा हुआ हाथ नहीं सूझता था॥2॥

*** कपि अकुलाने माया देखें। सब कर मरन बना ऐहि लेखें॥ कौतुक देखि राम मुसुकाने। भए सभीत सकल कपि जाने॥3॥

भावार्थ:-

माया देखकर वानर अकुला उठे। वे सोचने लगे कि इस हिसाब से (इसी तरह रहा) तो सबका मरण आ बना। यह कौतुक देखकर श्री रामजी मुस्कुराए। उन्होंने जान लिया कि सब वानर भयभीत हो गए हैं॥3॥

*** एक बान काटी सब माया। जिमि दिनकर हर तिमिर निकाया॥ कृपादृष्टि कपि भालु बिलोके। भए प्रबल रन रहहिं न रोके॥4॥

भावार्थ:-

तब श्री रामजी ने एक ही बाण से सारी माया काट डाली, जैसे सूर्य अंधकार के समूह कोहर लेता है। तदनन्तर उन्होंने कृपाभरी दृष्टि से वानर-भालुओं की ओर देखा, (जिससे) वे ऐसे प्रबल हो गए कि रण में रोकने पर भी नहीं रुकते थे॥4॥

दोहा :

*** आयसु मागि राम पहिं अंगदादि कपि साथ। लछिमन चले क्रुद्ध होइ बान सरासन हाथ॥52॥

भावार्थ:-

श्री रामजी से आज्ञा माँगकर, अंगद आदि वानरों के साथ हाथों में धनुष-बाण लिए हुए श्री लक्ष्मणजी क्रुद्ध होकर चले॥।52॥

चौपाई :

*** छतज नयन उर बाहु बिसाला। हिमगिरि निभ तनु कछु एक लाला॥ इहाँ दसानन सुभट पठाए। नाना अस्त्र सस्त्र गहि धाए॥1॥

भावार्थ:-

उनके लाल नेत्र हैं, चौड़ी छाती और विशाल भुजाएँ हैं। हिमाचल पर्वत के समान उज्ज्वल (गौरवर्ण) शरीर कुछ ललाई लिए हुए है। इधर रावण ने भी बड़ेबड़े योद्धा भेजे, जो अनेकों अस्त्र-शस्त्र लेकर दौड़े॥1॥

*** भूधर नख बिटपायुध धारी। धाए कपि जय राम पुकारी॥ भिरे सकल जोरिहि सन जोरी। इत उत जय इच्छा नहिं थोरी॥2॥

भावार्थ:-

पर्वत, नख और वृक्ष रूपी हथियार धारण किए हुए वानर 'श्री रामचंद्रजी की जय' पुकारकर दौड़े। वानर और राक्षस सब जोड़ी से जोड़ी भिड़ गए। इधर और उधर दोनों ओर जय की इच्छा कम न थी (अर्थात् प्रबल थी)॥2॥

*** मुठिकन्ह लातन्ह दातन्ह काटहिं। कपि जयसील मारि पुनि डाटहिं॥ मारु मारु धरु धरु धरु मारू। सीस तोरि गहि भुजा उपारू॥3॥

भावार्थ:-

वानर उनको घूँसों और लातों से मारते हैं, दाँतों से काटते हैं। विजयशील वानर उन्हें मारकर फिर डाँटते भी हैं। 'मारो, मारो, पकड़ो, पकड़ो, पकड़कर मार दो, सिर तोड़ दो और भुजाएँ पकड़कर उखाड़

लो'॥3॥

*** असि रव पूरि रही नव खंडा। धावहिं जहँ तहँ रुंड प्रचंडा॥ देखहिं कौतुक नभ सुरबृंदा। कबहुँक बिसमय कबहुँ अनंदा॥4॥

भावार्थ:-

नवों खंडों में ऐसी आवाज भर रही है। प्रचण्ड रुण्ड (धड़) जहाँ-तहाँ दौड़ रहे हैं। आकाश में देवतागण यह कौतुक देख रहे हैं। उन्हें कभी खेद होता है और कभी आनंद॥4॥

दोहा :

*** रुधिर गाड़ भरि भरि जम्यो ऊपर धूरि उड़ाइ। जनु अँगार रासिन्ह पर मृतक धूम रह्यो छाइ॥53॥

भावार्थ:-

खून गड्ढों में भर-भरकर जम गया है और उस पर धूल उड़कर पड़ रही है (वह दृश्य ऐसा है) मानो अंगारों के ढेरों पर राख छा रही हो॥53॥

चौपाई :

*** घायल बीर बिराजहिं कैसे। कुसुमति किंसुक के तरु जैसे॥ लछिमन मेघनाद द्वौ जोधा। भिरहिं परसपर करि अति क्रोधा॥1॥

भावार्थ:-

घायल वीर कैसे शोभित हैं, जैसे फूले हुए पलास के पेड़। लक्ष्मण और मेघनाद दोनोंयोद्धा अत्यंत क्रोध करके एक-दूसरे से भिड़ते हैं॥1॥

*** एकहि एक सकइ नहिं जीती। निसिचर छल बल करइ अनीती॥ क्रोधवंत तब भयउ अनंता। भंजेउ रथ सारथी तुरंता॥2॥

भावार्थ:-

एक-दूसरे को (कोई किसी को) जीत नहीं सकता। राक्षस छल-बल (माया) और अनीति (अधर्म) करता है, तब भगवान् अनन्तजी (लक्ष्मणजी) क्रोधित हुए और उन्होंने तुरंत उसके रथ कोतोड़ डाला और सारथी को टुकड़े-टुकड़े कर दिया!॥2॥

*** नाना बिधि प्रहार कर सेषा। राच्छस भयउ प्रान अवसेषा॥ रावन सुत निज मन अनुमाना। संकठ भयउ हरिहि मम प्राना॥3॥

भावार्थ:-

शेषजी (लक्ष्मणजी) उस पर अनेक प्रकार से प्रहार करने लगे। राक्षस के प्राणमात्र शेष रह गए। रावणपुत्र मेघनाद ने मन में अनुमान किया कि अब तो प्राण संकट आ बना, ये मेरे प्राण हर लेंगे॥3॥

*** बीरघातिनी छाड़िसि साँगी। तेजपुंज लछिमन उर लागी॥ मुरुछा भई सक्ति के लागें। तब चलि गयउ निकट भय त्यागें॥4॥

भावार्थ:-

तब उसने वीरघातिनी शक्ति चलाई। वह तेजपूर्ण शक्ति लक्ष्मणजी की छाती में लगी। शक्ति लगने से उन्हें मूर्छा आ गई। तब मेघनाद भय छोड़कर उनके पास चला गया॥4॥

दोहा :

*** मेघनाद सम कोटि सत जोधा रहे उठाइ। जगदाधार सेष किमि उठै चले खिसिआइ॥54॥

भावार्थ:-

मेघनाद के समान सौ करोड़ (अगणित) योद्धा उन्हें उठा रहे हैं, परन्तु जगत् के आधार श्री शेषजी (लक्ष्मणजी) उनसे कैसे उठते? तब वे लजाकर चले गए॥54॥

चौपाई :

*** सुनु गिरिजा क्रोधानल जासू। जारइ भुवन चारिदस आसू॥ सक संग्राम जीति को ताही।सेवहिं सुर नर अग जग जाही॥1॥

भावार्थ:-

(शिवजी कहते हैं-) हे गिरिजे! सुनो, (प्रलयकाल में) जिन (शेषनाग) के क्रोध की अग्नि चौदहों भुवनों को तुरंत ही जला डालती है और देवता, मनुष्य तथा समस्त चराचर (जीव) जिनकी सेवा करते हैं, उनको संग्राम में कौन जीत सकता है?॥1॥

*** यह कौतूहल जानइ सोई। जा पर कृपा राम कै होई॥ संध्या भय फिरि द्वौ बाहनी। लगे सँभारन निज निज अनी॥2॥

भावार्थ:-

इस लीला को वही जान सकता है, जिस पर श्री रामजी की कृपा हो। संध्या होने पर दोनों ओर की सेनाएँ लौट पड़ीं, सेनापति अपनी-अपनी सेनाएँ संभालने लगे॥2॥

*** व्यापक ब्रह्म अजित भुवनेस्वर। लछिमन कहाँ बूझ करुनाकर॥ तब लगि लै आयउ हनुमाना। अनुज देखि प्रभु अति दुख माना॥3॥

भावार्थ:-

व्यापक, ब्रह्म, अजेय, संपूर्ण ब्रह्मांड के ईश्वर और करुणा की खान श्री रामचंद्रजी ने पूछा- लक्ष्मण कहाँ है? तब तक हनुमान् उन्हें ले आए। छोटे भाई को (इस दशा में) देखकर प्रभु ने बहुत ही दुःख माना॥3॥

हनुमानजी का सुषेण वैद्य को लाना एवं संजीवनी के लिए जाना, कालनेमि-रावण संवाद, मकरी उद्धार, कालनेमि उद्धार

*** जामवंत कह बैद सुषेना। लंकाँ रहइ को पठई लेना॥ धरि लघु रूप गयउ हनुमंता। आनेउ भवन समेत तुरंता॥4॥

भावार्थ:-

जाम्बवान् ने कहा- लंका में सुषेण वैद्य रहता है, उसे लाने के लिए किसको भेजा जाए? हनुमान्‌जी छोटा रूप धरकर गए और सुषेण को उसके घर समेत तुरंत ही उठा लाए॥4॥

दोहा :

*** राम पदारबिंद सिर नायउ आइ सुषेन। कहा नाम गिरि औषधी जाहु पवनसुत लेन ॥55॥

भावार्थ:-

सुषेण ने आकर श्री रामजी के चरणारविन्दों में सिर नवाया। उसने पर्वत और औषध का नाम बताया, (और कहा कि) हे पवनपुत्र! औषधि लेने जाओ॥55॥

चौपाई :

*** राम चरन सरसिज उर राखी। चला प्रभंजनसुत बल भाषी॥ उहाँ दूत एक मरमु जनावा। रावनु कालनेमि गृह आवा॥1॥

भावार्थ:-

श्री रामजी के चरणकमलों को हृदय में रखकर पवनपुत्र हनुमान्‌जी अपना बल बखानकर (अर्थात् मैं अभी लिए आता हूँ, ऐसा कहकर) चले। उधर एक गुप्तचर ने रावण को इस रहस्य की खबर दी। तब रावण कालनेमि के घर आया॥1॥

*** दसमुख कहा मरमु तेहिं सुना। पुनि पुनि कालनेमि सिरु धुना॥ देखत तुम्हहि नगरु जेहिं जारा। तासु पंथ को रोकन पारा॥2॥

भावार्थ:-

रावण ने उसको सारा मर्म (हाल) बतलाया। कालनेमि ने सुना और बार-बार सिर पीटा (खेद प्रकट किया)। (उसने कहा-) तुम्हारे देखते-देखते जिसने नगर जला डाला, उसका मार्ग कौन रोक सकता है?॥2॥

*** भजि रघुपति करु हित आपना। छाँड़हु नाथ मृषा जल्पना॥ नील कंज तनु सुंदर स्यामा।हृदयँ राखु लोचनाभिरामा॥3॥

भावार्थ:-

श्री रघुनाथजी का भजन करके तुम अपना कल्याण करो! हे नाथ! झूठी बकवाद छोड़ दो। नेत्रों को आनंद देने वाले नीलकमल के समान सुंदर श्याम शरीर को अपने हृदय में रखो॥3॥

*** मैं तैं मोर मूढ़ता त्यागू। महा मोह निसि सूतत जागू॥ काल ब्याल कर भच्छक जोई।सपनेहुँ समर कि जीतिअ सोई॥4॥

भावार्थ:-

मैं-तू (भेद-भाव) और ममता रूपी मूढ़ता को त्याग दो। महामोह (अज्ञान) रूपी रात्रि में सो रहे हो, सो जाग उठो, जो काल रूपी सर्प का भी भक्षक है, कहीं स्वप्न में भी वह रण में जीता जा सकता है?॥4॥

दोहा :

*** सुनि दसकंठ रिसान अति तेहिं मन कीन्ह बिचार। राम दूत कर मरौं बरु यह खल रत मल भार॥56॥

भावार्थ:-

उसकी ये बातें सुनकर रावण बहुत ही क्रोधित हुआ। तब कालनेमि ने मन में विचार किया कि (इसके हाथ से मरने की अपेक्षा) श्री रामजी के दूत के हाथ से ही मरूँ तो अच्छा है। यह दुष्ट तो पाप समूह में रत है॥56॥

चौपाई :

*** अस कहि चला रचिसि मग माया। सर मंदिर बर बाग बनाया॥ मारुतसुत देखा सुभ आश्रम। मुनिहि बूझि जल पियौं जाइ श्रम॥1॥

भावार्थ:-

वह मन ही मन ऐसा कहकर चला और उसने मार्ग में माया रची। तालाब, मंदिर और सुंदर बाग बनाया। हनुमान्‌जी ने सुंदर आश्रम देखकर सोचा कि मुनि से पूछकर जल पी लूँ जिससे थकावट दूर हो जाए॥1॥

*** राच्छस कपट बेष तहँ सोहा। मायापति दूतहि चह मोहा॥ जाइ पवनसुत नायउ माथा। लाग सो कहै राम गुन गाथा॥2॥

भावार्थ:-

राक्षस वहाँ कपट (से मुनि) का वेष बनाए विराजमान था। वह मूर्ख अपनी माया से मायापति के दूत को मोहित करना चाहता था। मारुति ने उसके पास जाकर मस्तक नवाया। वह श्री रामजी के गुणों की कथा कहने लगा॥2॥

*** होत महा रन रावन रामहिं। जितिहहिं राम न संसय या महिं॥ इहाँ भएँ मैं देखउँ भाई। ग्यान दृष्टि बल मोहि अधिकाई॥3॥

भावार्थ:-

(वह बोला-) रावण और राम में महान् युद्ध हो रहा है। रामजी जीतेंगे, इसमें संदेह नहीं है। हे भाई! मैं यहाँ रहता हुआ ही सब देख रहा हूँ। मुझे ज्ञानदृष्टि का बहुत बड़ा बल है॥3॥

*** मागा जल तेहिं दीन्ह कमंडल। कह कपि नहिं अघाउँ थोरें जल॥ सर मज्जन करि आतुर आवहु। दिच्छा देउँ ग्यान जेहिं पावहु॥4॥

भावार्थ:-

हनुमान्‌जी ने उससे जल माँगा, तो उसने कमण्डलु दे दिया। हनुमान्‌जी ने कहा- थोड़े जल से मैं तृप्त नहीं होने का। तब वह बोला- तालाब में स्नान करके तुरंत लौट आओ तो मैं तुम्हे दीक्षा दूँ, जिससे तुम ज्ञान प्राप्त करो॥4॥

दोहा :

*** सर पैठत कपि पद गहा मकरीं तब अकुलान। मारी सो धरि दिब्य तनु चली गगन चढ़ि जान॥57॥

भावार्थ:-

तालाब में प्रवेश करते ही एक मगरी ने अकुलाकर उसी समय हनुमान्‌जी का पैर पकड़ लिया। हनुमान्‌जी ने उसे मार डाला। तब वह दिव्य देह धारण करके विमान पर चढ़कर आकाश को चली॥57॥

चौपाई :

*** कपि तव दरस भइउँ निष्पापा। मिटा तात मुनिबर कर सापा॥ मुनि न होइ यह निसिचर घोरा। मानहु सत्य बचन कपि मोरा॥1॥

भावार्थ:-

(उसने कहा-) हे वानर! मैं तुम्हारे दर्शन से पापरहित हो गई। हे तात! श्रेष्ठ मुनि का शाप मिट गया। हे कपि! यह मुनि नहीं है, घोर निशाचर है। मेरा वचन सत्य मानो॥1॥

*** अस कहि गई अपछरा जबहीं। निसिचर निकट गयउ कपि तबहीं॥ कह कपि मुनि गुरदछिना लेहू।पाछें हमहिं मंत्र तुम्ह देहू॥2॥

भावार्थ:-

ऐसा कहकर ज्यों ही वह अप्सरा गई, त्यों ही हनुमान्‌जी निशाचर के पास गए। हनुमान्‌जी ने कहा- हे मुनि! पहले गुरुदक्षिणा ले लीजिए। पीछे आप मुझे मंत्र दीजिएगा॥2॥

*** सिर लंगूर लपेटि पछारा। निज तनु प्रगटेसि मरती बारा॥ राम राम कहि छाड़ेसि प्राना। सुनि मन हरषि चलेउ हनुमाना॥3॥

भावार्थ:-

हनुमान्‌जी ने उसके सिर को पूँछ में लपेटकर उसे पछाड़ दिया। मरते समय उसने अपना (राक्षसी) शरीर प्रकट किया। उसने राम-राम कहकर प्राण छोड़े। यह (उसके मुँह से राम-राम का उच्चारण) सुनकर हनुमान्‌जी मन में हर्षित होकर चले॥3॥

*** देखा सैल न औषध चीन्हा। सहसा कपि उपारि गिरि लीन्हा॥ गहि गिरि निसि नभ धावक भयऊ। अवधपुरी ऊपर कपि गयऊ॥4॥

भावार्थ:-

उन्होंने पर्वत को देखा, पर औषध न पहचान सके। तब हनुमान्‌जी ने एकदम से पर्वत को ही उखाड़ लिया। पर्वत लेकर हनुमान्‌जी रात ही में आकाश मार्ग से दौड़ चले और अयोध्यापुरी के ऊपर पहुँच गए॥4॥

भरतजी के बाण से हनुमान् का मूर्च्छित होना, भरत-हनुमान् संवाद

दोहा :

***देखा भरत बिसाल अति निसिचर मन अनुमानि। बिनु फर सायक मारेउ चाप श्रवन लगि तानि॥58॥

भावार्थ:-

भरतजी ने आकाश में अत्यंत विशाल स्वरूप देखा, तब मन में अनुमान किया कि यह कोई राक्षस है। उन्होंने कान तक धनुष को खींचकर बिना फल का एक बाण मारा॥58॥

चौपाई :

*** परेउ मुरुछि महि लागत सायक। सुमिरत राम राम रघुनायक॥ सुनि प्रिय बचन भरत तब धाए। कपि समीप अति आतुर आए॥1॥

भावार्थ:-

बाण लगते ही हनुमान्‌जी 'राम, राम, रघुपति' का उच्चारण करते हुए मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। प्रिय वचन (रामनाम) सुनकर भरतजी उठकर दौड़े और बड़ी उतावली से हनुमान्‌जी के पास आए॥1॥

*** बिकल बिलोकि कीस उर लावा। जागत नहिं बहु भाँति जगावा॥ मुख मलीन मन भए दुखारी। कहत बचन भरि लोचन बारी॥2॥

भावार्थ:-

हनुमान्‌जी को व्याकुल देखकर उन्होंने हृदय से लगा लिया। बहुत तरह से जगाया, पर वे जागते न थे! तब भरतजी का मुख उदास हो गया। वे मन में बड़े दुःखी हुए और नेत्रों में (विषाद के आँसुओं का) जल भरकर ये वचन बोले-॥2॥

*** जेहिं बिधि राम बिमुख मोहि कीन्हा। तेहिं पुनि यह दारुन दुख दीन्हा॥ जौं मोरें मन बच अरु काया॥ प्रीति राम पद कमल अमाया॥3॥

भावार्थ:-

जिस विधाता ने मुझे श्री राम से विमुख किया, उसी ने फिर यह भयानक दुःख भी दिया। यदि मन, वचन और शरीर से श्री रामजी के चरणकमलों में मेरा निष्कपट प्रेम हो,॥3॥

*** तौ कपि होउ बिगत श्रम सूला। जौं मो पर रघुपति अनुकूला॥ सुनत बचन उठि बैठ कपीसा। कहि जय जयति कोसलाधीसा॥4॥

भावार्थ:-

और यदि श्री रघुनाथजी मुझ पर प्रसन्न हों तो यह वानर थकावट और पीड़ा से रहित हो जाए। यह वचन सुनते ही कपिराज हनुमान्‌जी 'कोसलपति श्री रामचंद्रजी की जय हो, जय हो' कहते हुए उठ बैठे॥4॥

सोरठा :

*** लीन्ह कपिहि उर लाइ पुलकित तनु लोचन सजल। प्रीति न हृदय समाइ सुमिरि राम रघुकुल तिलक॥59॥

भावार्थ:-

भरतजी ने वानर (हनुमान्‌जी) को हृदय से लगा लिया, उनका शरीर पुलकित हो गया और नेत्रों में (आनंद तथा प्रेम के आँसुओं का) जल भर आया। रघुकुलतिलक श्री रामचंद्रजी का स्मरण करके भरतजी के हृदय में प्रीति समाती न थी॥59॥

चौपाई :

*** तात कुसल कहु सुखनिधान की। सहित अनुज अरु मातु जानकी॥ लकपि सब चरित समास बखाने। भए दुखी मन महुँ पछिताने॥1॥

भावार्थ:-

(भरतजी बोले-) हे तात! छोटे भाई लक्ष्मण तथा माता जानकी सहित सुखनिधान श्री रामजी की कुशल कहो। वानर (हनुमान्‌जी) ने संक्षेप में सब कथा कही। सुनकर भरतजी दुःखी हुएऔर मन में पछताने लगे॥1॥

*** अहह दैव मैं कत जग जायउँ। प्रभु के एकहु काज न आयउँ॥ जानि कुअवसरु मन धरि धीरा। पुनि कपि सन बोले बलबीरा॥2॥

भावार्थ:-

हा दैव! मैं जगत्‌ में क्यों जन्मा? प्रभु के एक भी काम न आया। फिर कुअवसर (विपरीत समय) जानकर मन में धीरज धरकर बलवीर भरतजी हनुमान्‌जी से बोले-॥2॥

*** तात गहरु होइहि तोहि जाता। काजु नसाइहि होत प्रभाता॥ चढु मम सायक सैल समेता। पठवौं तोहि जहँ कृपानिकेता॥3॥

भावार्थ:-

हे तात! तुमको जाने में देर होगी और सबेरा होते ही काम बिगड़ जाएगा। (अतः) तुम पर्वत सहित मेरे बाण पर चढ़ जाओ, मैं तुमको वहाँ भेज दूँ जहाँ कृपा के धाम श्री रामजी हैं॥3॥

*** सुनि कपि मन उपजा अभिमाना। मोरें भार चलिहि किमि बाना॥ राम प्रभाव बिचारि बहोरी। बंदि चरन कह कपि कर जोरी॥4॥

भावार्थ:-

भरतजी की यह बात सुनकर (एक बार तो) हनुमान्‌जी के मन में अभिमान उत्पन्न हुआ किमेरे बोझ से बाण कैसे चलेगा? (किन्तु) फिर श्री रामचंद्रजी के प्रभाव का विचार करके वे भरतजी के चरणों की वंदना करके हाथ जोड़कर बोले-॥4॥

दोहा :

*** तव प्रताप उर राखि प्रभु जैहउँ नाथ तुरंत। अस कहि आयसु पाइ पद बंदि चलेउहनुमंत॥60 क॥

भावार्थ:-

हे नाथ! हे प्रभो! मैं आपका प्रताप हृदय में रखकर तुरंत चला जाऊँगा। ऐसा कहकर आज्ञा पाकर और भरतजी के चरणों की वंदना करके हनुमान्‌जी चले॥60 (क)॥

*** भरत बाहु बल सील गुन प्रभु पद प्रीति अपार। मन महुँ जात सराहत पुनि पुनि पवनकुमार॥60 ख॥

भावार्थ:-

भरतजी के बाहु बल, शील (सुंदर स्वभाव), गुण और प्रभु के चरणों में अपार प्रेम की मनही मन बारंबार सराहना करते हुए मारुति श्री हनुमान्‌जी चले जा रहे हैं॥60 (ख)॥